International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 3; May 2017; Page No. 62-65

ऋग्वेदीय अग्नि देवताक सूक्तों में प्रतिपादित वैज्ञानिक तथ्य

रेखा कुमारी

संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत ।

प्रस्तावना

ऋग्वेद में अग्नि का वैज्ञानिक स्वरूप

अग्नि सृष्टि के मूल में विद्यमान है तथा यह सर्वव्यापक भी है । सम्पूर्ण विश्व की सृष्टि (उत्पत्ति), स्थिति (सत्ता और विकास) और संहार (विनाश या अंत) में अग्नि की विद्यमानता है । अथर्ववेद का कथन है कि अग्नि वैश्वानर रूप में विश्वकृत् अर्थात् सृष्टि का कर्ता है तथा विश्वशंभू अर्थात् संसार का कल्याण और पोषण करने वाला है-

"वैश्वानरो विश्वकृद् विश्वशंभूः" ।[1]

सम्पूर्ण विश्व के छोटे से छोटे और बड़े से बड़े पदार्थों में अग्नि व्याप्त रहती है । प्रत्येक अणु प्रति क्षण इस अग्नि की सक्रियता के कारण खंडित और विवर्तित होता रहता है जिसे अग्निकाण्ड कह सकते है । इस अग्निकाण्ड को विज्ञान की भाषा में तेजोविकिरण अथवा Radiation कहा जाता है ।

यदि यह अग्निकाण्ड न हो तो संसार में सृष्टि, स्थिति और संहार नही हो पायेगा । यह अग्निकाण्ड पदार्थ के कण-कण में चल रहा है जिसके फलस्वरूप प्रतिक्षण समस्त विश्व में और सभी भूतों में एक नई सृष्टि और संहार की प्रक्रिया चलती रहती है । इस प्रकार संसार का कोई भी स्थूल और सूक्ष्म भूत अजर-अमर नही है ।

सभी के अन्दर टूटने और गठन की प्रक्रिया चलती है जिसके कारण प्रत्येक क्षण एकजातीय पदार्थ टूटकर अन्य जातीय हो जाते हैं । उदहारणतः एक वृक्ष का विकास है जो कि पहले बीज रूप में होता है और फिर इस अग्निकाण्ड के कारण ही वह बीज रूप छोड़ कर छोटे से पौधे का रूप लेता है फिर अपनी सारी प्रक्रियाओं को पूर्ण करता हुआ वृक्ष बनता है । यह सब उस बीज में विद्यमान तेज के कारण ही होता है।

यह अग्नि साधारण अग्नि नही है अपितु परमाणु से लेकर सृष्टि के सभी पदार्थों में व्याप्त है । इसकी सत्ता से ही उत्पत्ति, ऊर्जा, प्रकाश, गति और विकास संभव है । वैज्ञानिक भाषा में अग्नि को Energy और अग्नि के कणों अर्थात् विद्युत्कणों को Electron कहा जाता है ।

वेद में कई ऐसे अग्नि देवता परक सूक्त हैं जिनमें अग्नि के वैज्ञानिक स्वरूप का परिचय मिलता है । अग्नि विराट्, सर्वव्यापक, चेतन और अमर आदि रूप में है । अग्नि का पृथिवी, यज्ञ और मनुष्य जाति से अधिक सम्बन्ध है । अग्नि देवताक परक सूक्तों में यज्ञ में प्रदीप्त अग्नि और उसमें डाली गई हवन सामग्री दोनों का ही सम्पूर्ण विश्व के लिये लाभदायक होना सिद्ध होता है ।

इस आधुनिक युग में भी प्रयोग में लाए जाने वाले कच्चा तेल आदि खनिजलवण जैसे बहुमूल्य पदार्थों, दैनिक जीवन मे प्रयुक्त होने वाले कीटनाशक और Room Freshner आदि पदार्थों की उत्पत्ति एवं प्रयोग विद्या भी अग्नि सम्बन्धी कार्यों से ली गई है । अग्नि के वैज्ञानिक सम्बन्धी तथ्य निम्न प्रकार से है ।

1. वैदिक आविष्कार

वैदिक काल में अथर्वा ऋषि को प्रथम वैज्ञानिक माना जा सकता है क्योंकि अथर्वा ऋषि के द्वारा ही अग्नि का आविष्कार किया गया है । ऋग्वेद के षष्ठ मण्डल में अथर्वा ऋषि द्वारा अग्नि को मथ कर उत्पन्न करने का वर्णन प्राप्त होता है । आज भी अग्नि को उसी प्रकार उत्पन्न किया जाता है जिस प्रकार अथर्वा ऋषि ने सिखाया था-

"इममु त्यमथर्ववदग्निं मन्थन्ति वेधसः ।
यमङ्कूयन्तमानयन्नमूरं श्याव्याभ्यः ॥"[2]

1.1 अरणि से अग्नि की उत्पत्ति

अथर्वा ऋषि ने सर्वप्रथम अरणि नामक वृक्ष की अरणियों में मन्थन अथवा घर्षण (Friction) पैदा कर अग्नि का आविष्कार किया था । यजुर्वेद में भी अथर्वा ऋषि का यह वर्णन प्राप्त होता है ।[3] अथर्वा के पुत्र दधीचि ऋषि द्वारा इस अग्नि को प्रयोग में लाये जाने का भी वर्णन यजुर्वेद में मिलता है ।[4]

ऋग्वेद में अरणियों के घर्षण से अग्नि की उत्पत्ति का वर्णन आया है और कहा गया है कि अरणि नामक वृक्ष की समिधाओं में अग्नि है ।[5] ऋग्वेद में दो पत्थरों की रगड़ से भी अग्नि की उत्पत्ति बताई गई है ।[6]

1.2 जल के मन्थन से अग्नि की उत्पत्ति

गिरते हुए या बहते हुए जल की ऊर्जा से जो विद्युत उत्पन्न की जाती है उसे जलविद्युत (hydro-electricity) कहा जाता है । ऋग्वेद में इस जलीय विद्युत का भी संकेत प्राप्त होता है । ऋषि अथर्वा द्वारा तालाब के जल से मन्थन (Friction) के द्वारा जलीय विद्युत (hydro-electric) का आविष्कार किया गया है-

त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत ।
मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥[7]

1.3 भूगर्भीय अग्नि

भूगर्भीय अग्नि का अभिप्राय गैस आदि से है जो कि इस पृथिवी के नीचे से उत्खनन के द्वारा निकलती है । ऋग्वेद आदि में 'पुरीष्यासो अग्नयः'[8] और 'पुरीष्योऽसि विश्वभरा'[9] से ज्ञात होता है कि भूगर्भीय प्रज्वलनशील पदार्थ अनेक है जैसे-पैट्रोल और कच्चा तेल आदि ।[10]

वेदों में अग्नि का भी उत्खनन द्वारा निकलने का संकेत मिलता है। इस आधुनिक युग में भी अग्नि अथवा बिजली की उत्पत्ति कार्य के अनुसार कभी ईंधन अर्थात् लकड़ी इत्यादि और कभी जल आदि से होती है।

2. अग्नि वर्षचक्र के निर्माता के रूप में

यजुर्वेद में वर्णन प्राप्त होता है कि इस अग्नि के कारण ही वर्षचक्र विधिवत् चलता है। भुलोक और द्युलोक के मध्य में अर्थात् अन्तरिक्ष में अनेक अग्नियां हैं। यह अग्नियां ही परस्पर मिलकर (समनसः) काम करती हैं जिससे कि ग्रीष्म, वर्षा और शरद् आदि ऋतुओं का नियंत्रण होता है।[11]

अथर्ववेद में अग्नि को ऋतुचक्र का प्रवर्तक कहा गया है। अग्नि ऋतुओं का निर्माता है और सभी ऋतु अग्नि के कारण ही नियंत्रित हैं- **"स विश्वा प्रति चाक्लृप ऋतून् उत् सृजते वशी।"[12]**

3. अग्नि विश्व की नाभि के रूप में

ऋग्वेद का कथन है कि अग्नि अपने वैश्वानर रूप में सभी लोकों की ऊर्जा का केन्द्र है क्योंकि उसे क्षिति की नाभि कहा गया है- **"वैश्वानर नाभिरसि क्षितीनां"**।[13] अग्नि की यही ऊर्जा सारे लोकों में व्याप्त है। ऋग्वेद में अग्नि को 'विश्वकृष्टि' अर्थात् सारे लोकों को आकर्षित करने वाला भी कहा गया है- **"वैश्वानरो महिम्ना विश्वकृष्टिः"**।[14] यह आकर्षण शक्ति वैज्ञानिक भाषा में Magnetic power कहलाती है।

4. पुरीष्य अग्नि (Plutonic Energy) के रूप में

पुरीष्य अग्नि से तात्पर्य भूगर्भीय अग्नि (Plutonic Energy) से है। यह पुरीष्य अग्नि पृथिवी के अन्दर स्थित है तथा यह अत्यन्त भीषण गर्म है। इसके तेज से ही भूतल के नीचे विद्यमान् पत्थर और चट्टानें गर्म होकर पिघल जाती है जिसके कारण पेट्रोल और गैस आदि का निर्माण होता है।

ज्वालामुखी जैसी प्राकृतिक आपदाओं में अग्नि की विशेष भूमिका ध्यात्वय है। यह अग्नि बहुत ही अधिक प्रज्वलनशील है। इसे सावधानी से निकालना चाहिए क्योंकि इससे जन-धन आदि की हानि हो सकती है–

"ज्योतिष्मन्तं त्वाऽग्ने सुप्रतीकम्, अजस्रेण भानुना दीद्यतम्।
शिवं प्रजाभ्योऽहिंसन्तम्... अग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वत् खनामः॥"[15]

ऋग्वेद में इस पुरीष्य अग्नि अर्थात् समुद्री अग्नि अथवा गैस का उल्लेख करते हुए अग्नि को **'समुद्रवाससम्'** कहा गया है।[16] इस पुरीष्य अग्नि के समुद्र में चारों ओर फैलने के संकेत यजुर्वेद में भी मिलते हैं।[17]

पृथिवी के अन्दर प्राप्त होने वाले खनिज लवण और स्वर्ण आदि रत्न अग्नि की ऊष्मा से ही बनते है। यह अग्नि पर्वतों, वनस्पतियों, जल और मानव आदि में विद्यमान रहती है-

"आ सूर्ये न रश्मयो ध्रुवासो वैश्वानरे दधिरेऽग्रा वसूनि।
या पर्वतेष्वोषधीष्वप्सु या मानुषेष्वसि तस्य राजा॥"[18]

5. सर्वव्यापक रूप में

वेदों में अग्नि को सर्वव्यापक (Omnipresent) बताया गया है। यह भुलोक, अन्तरिक्ष लोक और द्युलोक के प्रत्येक कण में व्याप्त है। वह अपनी शक्ति से भुलोक में वृक्ष-वनस्पतियों में विद्यमान है तथा अन्तरिक्ष को शक्ति देता है और द्युलोक को तेज से व्याप्त करता है।[19] यह विश्व की चेतना का आधार है।[20]

6. विराट् रूप में

ऋग्वेद और यजुर्वेद में कई वर्णन ऐसे प्राप्त होते हैं जिनमें अग्नि का विराट् रूप बहुत विस्तार से वर्णित है। अग्नि के हजारों आंखें, सिर तथा सैकड़ों प्राण और व्यान हैं। सृष्टि के मूल में अग्नि अथवा ऊर्जा ही है।

अग्नि ही एक तत्त्व है जो देवी, देवता या शक्ति के रूप में सर्वत्र व्याप्त है। इसी एक तत्त्व का वर्णन करते हुए ऋग्वेद में कहा गया है कि तत्त्व एक ही है, उसे ही अग्नि, इन्द्र, वरुण, मित्र, सुपर्ण, वायु, मरुत् और यम आदि नाम दिए गए हैं।

"इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः"॥[21]

व्यापक रूप में अग्नि एक Universal Energy है। ऋग्वेद में अग्नि को सर्वदेवमय कहा गया है। सभी देवता अग्नि के विभिन्न कार्यों के कारण पृथक-पृथक नाम से अभिहित होते है।[22]

7. अमर और चेतन रूप में

ऋग्वेद में अग्नि को अमर और अमरणशील[23] माना है। अग्नि को अमर देवता के रूप में जरारहित[24] और साथ ही प्रभु, तेजस्वी, दर्शनीय और बलवान के रूप में भी प्रतिष्ठित किया गया है। यजुर्वेद में भी अग्नि के लिए अमर शब्द का प्रयोग किया गया है।

यह अग्नि नश्वर जगत् में अनश्वर या अविनाशी (Indestructible) है। इसका कारण बताया गया है कि अग्नि में मौलिक ऊर्जा (Potential Energy) होती है, अतः इसका नाश नही होता है। वेदों में अग्नि की इस मौलिक ऊर्जा के लिए **'वयस्'** शब्द आया है।[25]

ऋग्वेद में अग्नि को चेतन या विचेतस् अर्थात् विशिष्ट चेतना (Animate, Sentient, Conscious) वाला कहा गया है। अर्थात् अग्नि अचेतन नही है। वह सूर्य के प्रकाश के रूप में ऊर्जा और चेतना देने वाली शक्ति है और स्वयं चेतन है।[26]

8. स्थूल और सूक्ष्म रूप में

अग्नि का स्थूल और सूक्ष्म रूप इस सम्पूर्ण जगत् में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में विद्यमान है। वृक्ष और वनस्पति आदि में यह दावाग्नि रूप में विद्यमान है।[27] मेघ इत्यादि में विद्युत् और गर्जन आदि रूप में विद्यमान है। अरणि आदि में यह घर्षण आदि क्रिया द्वारा व्यक्त होता है।[28]

9. कार्य रूप में

यजुर्वेद के मन्त्रों में अग्नि के कुछ कार्य बताए गए है जो कि उसके वैज्ञानिक स्वरूप को दर्शाते हैं। तीनों लोको में अग्नि के तीन-तीन कार्य है।[29]

पृथिवी पर यह तीन कार्य हैं- १. सम्पूर्ण जीवों एवं वृक्ष-वनस्पतियों को सौर ऊर्जा देना। २. समुद्र आदि से जल को भाप रूप में अन्तरिक्ष में भेजना। ३. भूलोक को जीवन शक्ति देना। अन्तरिक्ष में अग्नि के तीन कार्य हैं- १. मेघों का निर्माण करना, २. विद्युत् शक्ति को उत्पन्न करना,

३. गर्जन और वृष्टि करना। द्युलोक में तीन कार्य हैं- १. प्रकाश देना, २. ऊर्जा देना या भरण-पोषण करना, ३. ग्रह-उपग्रहों का आकर्षण द्वारा नियन्त्रण करना।

10. चतुर्विध शक्ति के रूप में

यजुर्वेद में उल्लेखनीय है कि अग्नि चार प्रकार की शक्ति से युक्त है-

"पाहि नो अग्न एकया, पाह्युत द्वितीयया।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिः, ऊर्जा पते पाहि चतसृभिर्वसो॥"[30]

10.1. आधिभौतिक शक्ति

अग्नि की भौतिक शक्ति, दहन, ज्वलन, पाचन, प्रकाश करना तथा सभी जीवों को ऊर्जा प्रदान करना है। यह अग्नि के आधिभौतिक कार्य है जो कि उसके वैज्ञानिक स्वरूप को दर्शाते है।

10.2. आधिदैविक शक्ति

विद्युत् या तडित् के रूप में ऊर्जा का प्रसारण, परमाणुओं को जोड़ना और पृथक करना, मेघ रचना, वृष्टि करना, विद्युत द्वारा ध्वनि को दूर पहुंचाना, सुनना-सुनाना और ध्वनि का प्रसारण करना आदि कार्य अग्नि की आधिदैविक शक्ति का परिचय देते है।

10.3. आध्यात्मिक शक्ति

आत्मिक शक्ति को बढ़ाना, ध्यान, मनन तथा चिंतन आदि की शक्ति को बढ़ाना, आत्मिक उन्नति और आत्म-साक्षात्कार कराना आदि अग्नि के आधिदैविक शक्ति का परिचय देते हैं।

11. अग्नि का अन्य वैज्ञानिक स्वरूप

ऋग्वेद में अग्नि को शक्ति का पुत्र अर्थात् 'सहसस्पुत्रः' कहा गया है। वह 'विद्युद्रथः' भी है अर्थात् अग्नि के रथ में विद्युत् लगी हुई है। जब दो पदार्थों में रगड़ लगती है तब अग्नि की उत्पत्ति होती है। अतः कहा जा सकता है कि जहां अग्नि है वहां बिजली अथवा Electricity का होना भी निश्चित ही है। अग्नि का ही एक रूप बिजली (Lightning) है जो आकाश में मेघों की रगड़ से उत्पन्न होती है।

पृथिवी पर जल आदि की रगड़ से विद्युत् (Electricity) या अन्य गैस आदि निर्मित होती है। समुद्र में विद्यमान् अग्नि वाडवाग्नि है अर्थात् Submarine fire। वन की अग्नि दावाग्नि है अर्थात् Forest conflagration। भूगर्भ की अग्नि Plutonic fire और ज्वालामुखी की अग्नि Volcanic fire है। ऋग्वेद में इसका उल्लेख प्राप्त होता है-

"आ होता मन्द्रो विदथान्यस्थात्सत्यो यज्वा कवितमः स वेधाः।
विद्युद्रथः सहसस्पुत्रो अग्निः शोचिष्केशः पृथिव्यां पाजो अश्रेत्॥"[31]

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वैदिक देवताओं के स्वरूप में कई ऐसी विशेषताएँ हैं जो वैदिक देवताओं के वैज्ञानिक पक्ष को प्रस्तुत करते हैं। अतः अग्नि देवता परक सूक्तों के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि अग्नि देवता अपने स्वरूप में कई वैज्ञानिक तथ्यों को लिये हुए है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मन्त्रदृष्टा ऋषियों की दृष्टि केवल आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक तथा आधियाज्ञिक ही नही है अपितु उनकी दृष्टि वैज्ञानिक रूप से भी सुदृढ़ है।

संदर्भ सूची

1. अथर्ववेद : 6.47.1
2. ऋ., 6.15.17
3. यजु., 11.32 : अथर्वा त्वा प्रथमो निरमन्यद् अग्ने।
4. यजु. 11.33 : तमु त्वा दध्यङ् ऋषिः पुत्र ईधे अथर्वणः।
5. ऋ., 3.29.2 : अरण्योर्निहितो जातवेदः। वही 3.29.1 : अग्निं मन्थाम पूर्वथा।
6. वही 2.12.3 : यो अश्मनोरन्तरग्निं जजान।
7. ऋ., 6.16.13
8. यजु., 11.31
9. वही, 11.32
10. वैदिक देवों का आध्यात्मिक और वैज्ञानिक स्वरूप, पद्मश्री डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, पृ. 117
11. यजु., 14.6 : शुक्रश्च शुचिश्च ग्रैष्मावृतू अग्नेरन्तः स्लेषोऽसि...। ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे।

    वही, 14.15 : नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतू..। ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे।

    वही 14.16 : इषश्चोर्जश्च शारदावृतू... । ये अग्नयः समनसोऽन्तरा...।
12. अथर्ववेद., 6.36.2
13. ऋ., 1.59.1
14. ऋ., 1.59.7
15. यजु. 11.28
16. ऋ., 8.102.4 : और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदा हुवे । अग्निं समुद्रवाससम्॥

    वही 8.102.5 : हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः । अग्निं समुद्रवाससम्॥

    वही 8.102.6 : आ सवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजिं हुवे । अग्निं समुद्रवाससम्॥
17. यजु. 11.29 : अपां पृष्ठमसि योनिरग्नेः, समुद्रमभितः पिन्वमानम्।
18. ऋ., 1.59.3
19. यजु., 17.72 : भासा-अन्तरिक्षम् आ पृण, ज्योतिषा दिवम् उत्तभान, तेजसा दिश उद्दृंह।

    वही, 18.73 : पृष्टो दिवि, पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषधीरा विवेश।
20. वही, 12.23 : विश्वस्य केतुः, भुवनस्य गर्भः। आ रोदसी अपृणात्।
21. ऋ., 1.164.46
22. ऋ., 2.1.3 : त्वमग्न इन्द्रो वृषभः सतामसि त्वं विष्णुरुरुगायो नमस्यः। त्वं ब्रह्मा रयिविद्ब्रह्मणस्पते त्वं विधर्तः सचसे पुरंध्या॥

वही, 2.1.4 : त्वमग्ने राजा वरुणो धृतव्रतस्त्वं मित्रो भवसि दस्म ईड्यः। त्वमर्यमा सत्पतिर्यस्य सम्भुजं त्वमंशो विदथे देव भाजयुः॥

23. वही, 6.16.6 : त्वं दूतो अमर्त्य आ वहा दैव्यं जनम् । शृण्वन्विप्रस्य सुष्टुतिम् ॥
24. ऋ., 6.2.9 : त्वं त्या चिदच्युताग्ने पशुर्न यवसे । धामा ह यत्ते अजर वना वृश्चन्ति शिक्वसः ॥
25. यजु., 12.24 : मर्तेषु-अग्निरमृतो नि धायि ।

    यजु., 12.25 : अग्निरमृतो अभवद् वयोभिः ।
26. ऋ., 1.115.1 : सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ।
27. ऋ., 2.1.1: त्वमग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यस्त्वमश्मनस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥
28. ऋ., 7.1.1 : अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युती जनयन्त प्रशस्तम् । दूरेदृशं गृहपतिमथर्युम् ॥
29. यजु., 29.15 : त्रीणि त आहुर्दिवि बन्धनानि । त्रीणि-अप्सु, त्रीणि-अन्तः समुद्रे ।
30. यजु., 27.43
31. ऋ., 3.14.1